भारतीय परम्पराओं में शिक्षा

शिक्षा शब्द का इस्तमाल बहुदा अर्थ की स्पष्टता बगैर होत रहता है। इसको सामान्य रूप स अँग्रजी क शब्द एडुकशन का पर्याय मान लिया जाता है और संभवतः इसीलिए साधारण पढ़ाई-लिखाई को ही अक्सर शिक्षा समझ लिया जाता है। हाल ही में भारत सरकार द्वारा "शिक्षा क अधिकार" बिल की बहुत चर्चा हो रही है। इस लंब चौड़ बिल में "शिक्षा" को परिभाषित करन की ज़रूरत नहीं समझी गई। ऐसा मान लिया गया है कि "शिक्षा" क मायन सभी को मालूम हैं और यह भी कि सभी की समझ/ सभी क मायन एक जैस हैं।

आज की शिक्षा और शिक्षा व्यवस्था स कोई भी खुश नहीं। जो लोग शिक्षा क बुनियादी दर्शन स बहुत सरोकार नहीं रखना चाहत व भी इसक परिणामों स ज्यादा उत्साहित नहीं दिखत। फिर भी शिक्षा क व्यापीकरण क अथक प्रयास हो रह हैं। शिक्षा में सुधार क बहुत सार प्रयास होत रहत हैं, इनम कुछ अच्छ भी हैं पर प्रायः सभी कोशिशें एक पहल स चल आ रह दायर क अंदर ही होती लगती हैं। इनकी मूल मान्यताएँ एक जैसी ही होती हैं।

परंतु भारत में अलग अलग परम्पराएँ रहीं हैं – बोद्ध, जैन, इस्लाम, सनातनी हिन्दू और उसम अनक धाराएँ, कृष्णमूर्ति, गांधी, ओरोबिंदो, इत्यादि – जिसमें "शिक्षा" क विशिष्ट अर्थ हैं। इस समझन की ज़रूरत लगती है कि शिक्षा का अर्थ, जो आज प्रचलित है क्या वही अर्थ भारत की परम्पराओं में भी है या उसस भिन्न है। इनका बुनियादी दर्शन, खासकर शिक्षा क संदर्भ में, क्या है? शिक्षा क प्रयोजन को कैस दखा गया है?

शिक्षा को जीवन स अलग करक नहीं दखा जा सकता। आखिर शिक्षा मनुष्य क लिए है। पशु-संसार को शिक्षा की आवश्यकता नहीं – ज्यादा स ज्यादा, उन्ह मनुष्य अपनी जरूरतों को पूरा करन क लिए, प्रशिक्षण द सकता है। मनुष्य अपन वातावरण, जिसम वह रहता है और विचरण करता है, को प्रकृति क दूसर घटकों स ज़्यादा, प्रभावित करता भी है और अधिक संवदनशील होन की वजह स प्रकृति स ज्यादा प्रभावित भी होता है। उस जैसी शिक्षा और संस्कार मिल होत हैं उसका व्यवहार और कार्य उसी स संचालित होता है।

आज पूरी दुनिया क सामन तीन बड़ी समस्याएँ मुंह बाय खड़ी हैं जिनका कोई समाधान आधुनिक विज्ञान और आधुनिक ज्ञान-परम्पराओं क पास नहीं दिखता। पर्यावरण की

समस्या – धरती का तापमान बढ़ना, बर्फ का पिघलना, समुद्र के स्तर का बढ़ना, कई प्रकार के जीव- जंतुओं का नष्ट होने की कगार पर पहुँचना। हवा, पानी और धरती में बढ़ता प्रदूषण, पीने के पानी की समस्या, नदियों का लुप्त प्रायः होना – ये ऐसी विकराल समस्याएँ हैं जिसका निदान किसी के पास नहीं दिखता। इसी प्रकार युद्ध और आतंकवाद ने सीमा लांघ ली ह। आतंकवाद को रोकने के लिए अब दुनिया भर की सरकारें वही रास्ता अख़्तियार करने को बाध्य हैं, जिनका वो विरोध कर रही होती हैं। युद्ध को रोकने के लिए भी और अधिक हथियारों का भंडारण ही एकमात्र रास्ता रह गया लगता ह। इसी प्रकार आर्थिक संकट भी उस जगह पहुँच गया ह जहां प्रकृति का दोहन और शोषण अनिवार्य हो गया ह। खपत को बढ़ाए बगर आर्थिक व्यवस्था को टिकाए रखना मुश्किल हो गया ह और खपत लगातार बढ़ेगी तो प्रकृति का शोषण और प्रदूषण का बढ़ना अनिवार्य ह। इस व्यवस्था में गरीबी और अमीरी के बीच भी फासला बढ़ते रहना अनिवार्य ह। यह तीनों समस्याएँ एक दूसरे की पोषक और पूरक हैं। यदि एक का कोई छोटा मोटा समाधान समझ भी आता ह तो दूसरी समस्याएँ बढ़ती नज़र आती हैं।

एक और संकट सामने ह जिसकी और अभी ज्यादा ध्यान नहीं गया ह – वह ह आस्था का संकट। किसी भी व्यक्ति, सूचना, रिपोर्ट, खोज, पर लोगों का भरोसा कम होते जा रहा ह। आधुनिक विज्ञान ने ईश्वर पर आस्था को तो पहले ही भारी चोट पहुंचाई ह अब नई खोजों पर भी भरोसा लगातार कम होते जा रहा ह। चाहे अँग्रेजी दवाईयाँ हो, डाक्टर हो, न्याय प्रणाली हो, आधुनिक तकनीकें हो, पसों का मामला हो – लोगों का भरोसा कम होते जा रहा ह भले ही उन्हे कोई ठोस विकल्प न समझ आ रहा हो। इसी अनुपात में असुरक्षा की भावना बढ़ती जा रही ह। इस सबके बीच आम आदमी संकुचित होता जा रहा दिखता ह। वह सुरक्षा कि फिराक में डरा हुआ सा खुद से मतलब रखने में ही सिमटता जा रहा ह या फिर किसी नये संप्रदाय के चक्कर में अपने को भुलावे में रखता ह।

यह सब आज “विकास” के युग में जिस रास्ते हम चल पड़ें हैं उसके परिणाम हैं। और आधुनिक “शिक्षा” चूंकि इसीसे निकली ह, इसमे अहम भूमिका निभाती ह।

उक्त संदर्भ में हमें हमारी विभिन्न परम्पराओं में “शिक्षा” को, इसके दर्शन एवं प्रयोजनों को कसे देखा जाता रहा ह, इसे समझना और इस पर चर्चा आगे बढ़ानी आवश्यक लगती ह। शिक्षा को विभिन्न भारतीय परम्पराएँ कसे परिभाषित करती हैं, उनकी मूलभूत अवधारणायेँ क्या हैं, मनुष्य और प्रकृति के रिश्ते को कसे देखा जाता रहा ह और शिक्षा का इस समझ से कसा संबंध ह। इन सब बातों को समझना और उसे सही प्रकार लोगों

के सामन लाना अति आवश्यक लग रहा है, भल ही वर्तमान वातावरण इस प्रकार की शिक्षा क लिए सहयोगी न भी हो।

“डीयर ार्क इंस्टीट्यूट” और “सिद्ध” उक्त मुद्दो को लेकर एक चार दिवसीय गोष्ठी का आयोजन कर रहे हैं। गोष्टी श्रद्धेय प्रोफेसर सामदोंग रिन्ं चे जी के संगरक्षण में होगी। इसमे विभिन्न भारतीय रम् राओं के विद्वान विशेष रू से आमंत्रित होंगे जो अ नी-अ नी रम् राओं का दृष्टिकोण रखेंगे। तकरीबन बीस विद्वान और दस अन्य लोग आमंत्रित होंगे जो चर्चा को सुन सकेंगे और उसके बाद सीमित अवधी में प्रश्न ूछ कर अ नी जिज्ञासा शांत करने का प्रयास करेंगे। गोष्ठी में बहस नही, संवाद और दूसरे को उनके अर्थों में सुनने का प्रयास होगा। ताकि चर्चा सार्थक और सं ूर्णता में हो सके इसलिए गोष्ठी चार दिनो – 29 सितंबर सुबह से 2 अक्टूबर – के लिए प्रस्तावित है। गोष्ठी डीयर ार्क इंस्टीट्यूट, बीर, हिमाचल प्रदेश में होगी। प्रतिभागियों से निवेदन है कि वे 28 तारीख को ही हुँच जाये ताकि सभा 29 को सुबह समय से प्रारम्भ की जा सके। यह भी उम्मीद है की वे ूरी अवधी के लिए अ नी भागीदारी निभाएंगे। समस्त चर्चा को हम रिकार्ड करेंगे ताकि एक अच्छी रि ोर्ट बाद में निकाली जा सके - भविष्य में चर्चा को आगे बढ़ाने हेतु।